# नाटक की किताब पर विचार यानी नाटक पर अधूरा विचार

**प्रभात**

बाल साहित्य समीक्षा में अशोक वाजपेयी के संपादन में निकली पुस्तक 'उमंग' की समीक्षा है। यह पुस्तक दिल्ली में बाल रंगमंच पर काम कर रही संस्था 'उमंग' के रजत जयन्ती के उपलक्ष्य में हिंदी के ख्यातनाम लेखकों से नाटक, पटकथा और कहानियों का साग्रह लेखन करवाकर प्रकाशित की गई है।

''नाटक साहित्यिक अभिव्यक्ति की ऐसी विधा है जो केवल साहित्य नहीं, उससे अधिक कुछ और भी है, क्योंकि रचना की प्रक्रिया लेखक द्वारा लिखे जाने पर ही समाप्त नहीं होती, उसका पूर्ण प्रस्फुटन और सम्प्रेषण रंगमंच पर ही जाकर होता है।

..... इसलिए रंगमंच से अलग करके नाटक का मूल्यांकन और उसके विविध अंगों पर विचार अपूर्ण ही नहीं भ्रामक हो जाता है। संसार के नाटक साहित्य के इतिहास में कहीं भी नाटक को रंगमंच से अलग करके केवल साहित्यक रचना के रूप में नहीं देखा जाता.....।''

''नाटक को सम्पूर्णता रंगमंच पर ही प्राप्त होती है। वास्तव में अपनी मूल प्रकृति की दृष्टि से नाटक वह संवादमूलक कथा है जिसे अभिनेता रंगमंच पर नाट्य व्यापार के रूप में दर्शक वर्ग के सामने प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार नाटक के तीन मौलिक पक्ष हैंः कवि या नाटककार द्वारा तैयार की हुई संवादात्मक कथा, अभिनेताओं द्वारा उसका अभिनय प्रदर्शन और दर्शक वर्ग। नाटक का कोई भी विवेचन इन तीनों पक्षों को एक साथ समंजित किए बिना सर्वांगीण नहीं हो सकता। इस परिभाषा के अनुसार केवल संवाद के रूप में लिखे जाने पर ही कोई रचना नाटक नहीं हो जाती। यह अत्यंत ही आवश्यक है कि उसकी अंतर्निहित कथा का भावन दृश्य वस्तु के रूप में किया गया हो।''

''नाटक में नाटककार के अतिरिक्त अभिनेता, निर्देशक, रंगशिल्पी तथा समूह रूप में उपस्थित दर्शक वर्ग आदि ऐसे तत्व मौजूद हैं जो अन्य किसी कला रूप में नहीं होते। इसीलिए नाटक का मूल्यांकन इतने सब तत्वों की एक साथ परीक्षा किए बिना संभव नहीं है। केवल लिखित नाटक की जांच पड़ताल कम से कम उतनी एकांगी तो है ही जितनी नाट्य प्रदर्शन में निरे अभिनय की चर्चा।''

- नेमिचंद जैन, रंगदर्शन, पृष्ठ संख्या क्रमशः 21, 22 और 178

अगर इन सारी बातों से कोई सैद्धांतिक असहमति नहीं हो तो यह स्वीकार कर लेने में कोई हर्ज नहीं है कि नाटक की किताब पर चर्चा करना उसके तीन मौलिक पक्षों में से केवल एक तक ही चर्चा को सीमित रखना है और इस अर्थ में

**लेखक परिचय :**

एम.ए. हिन्दी साहित्य, लिखने-पढ़ने में रुचि रखने वाले प्रभात मूलतः कवि हैं। राष्ट्रीय स्तर की विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में कविताएं प्रकाशित। 'काली बाई' नाटक एवं बाल कविता संग्रह 'पानियों की गाड़ियों में' लोकायत प्रकाशन, जयपुर से प्रकाशित।

**सम्पर्क :**

31 बी, पुरुषार्थ नगर बी,
जगतपुरा, जयपुर - 302025
राजस्थान

नाटक की किताब पर चर्चा करना नाटक पर अधूरी या आंशिक चर्चा करना है।

मगर जब नाटक की कोई नई किताब दृश्य में आती है तो लोगों को उसके बारे में जानकारी हो सके इसके लिए केवल किताब की चर्चा पर ही निर्भरता नाट्य पुस्तक समीक्षा की विश्वता भी है। यूं यह कोई गौण कर्म भी नहीं है-आखिर तो किसी नाटक का लिखित रूप भी वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पक्ष है जिससे कि किसी नाटक की सफलता-विफलता का काफी कुछ निर्धारण हो चुका होता है।

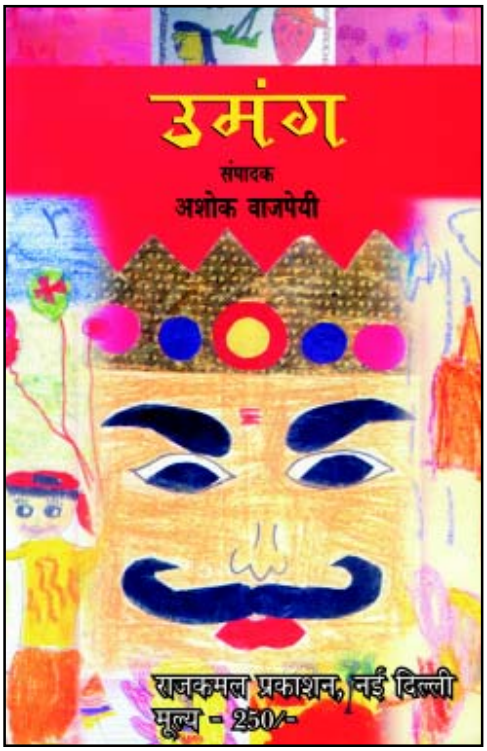


हिन्दी जगत में नाटक की किताब और खास तौर से बच्चों के लिए नाटक की किताब एक खास स्वागत भाव से देखने योग्य वस्तु होती है। इसकी वजह यह है कि हिन्दी में बच्चों के लिए नाटक लेखन अपनी आरंभिक अवस्था से गुजर रहा है। रेखा जैन, व कारंत, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना जैसे गिने-चुने नाटककार ही अभी तक हिन्दी को मिले हैं। पन्द्रह अगस्त, छब्बीस जनवरी, गांधी जयंती, अंबेडकर जयंती जैसे अवसरों पर शिक्षक बेचारे एक अदद नाटक के लिए मारे-मारे फिरते हैं। नाटक करने में रुचि रखने वाली मंडलियां स्क्रिप्ट के लिए दांए-बांए होती रहती हैं। ऐसे में उमंग संस्था दिल्ली के रजत पर्व पर अशोक वाजपेयी के संपादन में आयी पुस्तक 'उमंग' जो कि नाटक, कहानी और पटकथा का संचयन है, एक उमंग पैदा करने वाली घटना है। इसमें कुल 12 रचनाएं हैं। एक कहानी, एक पटकथा और दस नाटक।

'उमंग' संचयन में तीन रचनाएं ऐसी हैं जो कि अन्य विधा की रचना का नाट्य रूपांतर हैं। '' आविष्कार जूते का '' रवीन्द्रनाथ टैगोर की कविता 'जूता आविष्कार' पर आधारित नाट्य रचना है। हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक श्रीलाल शुक्ल ने इस बंग्ला कविता का नाट्य रूपांतर किया है। दूसरी रचना प्रसिद्ध लोककथा 'गड़रिया राजा' पर आधारित विजयदान देथा द्वारा पुनर्लिखित कहानी पर आधारित फिल्म के लिए लिखी गई पटकथा-'अनमोल खजाना' है। यह पटकथा लेखन किया है कथाकार उदय प्रकाश ने। तीसरी रचना है 'ब्रह्मराक्षस का नाई'। आर. के. रामानुजन द्वारा संकलित भारत की लोक कथाएं में संकलित बंग्ला लोककथा पर आधारित इस कथा का रूपांतरण किया है प्रसिद्ध हिन्दी कवि राजेश जोशी ने। नाट्य रूपांतरण को समझने की दृष्टि से इन मूल रचनाओं और इन नाट्य रूपांतरणों को एक साथ रखकर पढ़ना महत्वपूर्ण साबित हो सकता है।

शिक्षकों और नाटक में रुचि रखने वालों को नाट्य रूपांतरण की आवश्यकता पड़ती है। यह आवश्यकता इसलिए पड़ती है कि हिन्दी में बच्चों के लिए अच्छे नाटकों की बेहद कमी है। इसलिए कहानियों के नाट्य रूपांतरण की ओर जाना लोगों की विवशता भी है। यहां यह एक देखने वाली बात है कि लोग नाट्य रूपांतरण के लिए कहानियों की ओर ही क्यों जाते हैं ? क्यों नहीं वे अपने को इस मामले में खुला रख पाते और कविता, रिपोर्ताज, संस्मरण, ऐतिहासिक घटना या किसी अन्य रचनात्मक गद्य की ओर भी जाते ? इसकी वजह शायद यह है कि नाट्य रूपांतरण अपने आप में मौलिक नाटक लिखने से कम जहमत का काम नहीं है। दूसरी बात यह कि सही अर्थों में नाट्य रूपांतर है क्या ? इस बारे में लोगों में कोई साफ समझ भी नहीं होती है। उन्होंने इस बारे में रंगमंचीय दृष्टि से बहुत सोचा नहीं होता है। यही वजह है कि जब उन्हें अपनी जरूरत के हिसाब से कहीं कोई ढंग का नाटक नहीं मिल रहा होता है तो वे तुरंत कहानी की ओर भागते हैं। वरना तो नाट्य रूपांतरण और अपनी जरूरत के नाटक को लेकर सजग दृष्टि हो तो अन्य विधाएं कोई बाधा नहीं हैं। टैगोर की कविता का नाट्य रूपांतण इस मामले में सुंदर उदाहरण है। इस रूपांतरण में हम देख सकते हैं कि टैगोर की कविता और उसके निहितार्थ उतने ही नहीं रह गए हैं। नाट्य की दृष्टि से तो एकदम भिन्न रचना हो ही गई है, विषय वस्तु की दृष्टि से भी वह अपने युग के अनुरूप हो गई है। नवीन घटनाओं के चयन में और उन्हें मूल रचना से अभिन्न कर देने में यह गुण देखा जा सकता है। हमारे लिए रूपांतरण को पढ़ने से पहले केवल कविता को पढ़कर कल्पना करना मुश्किल हो सकता था कि

इसमें नाटक की इतनी संभावनाएं छुपी हैं।

किसी कविता या कहानी को नाटक में बदलने का मतलब उसे संवादों में ढाल देना भर नहीं है। अन्य विद्या की रचना को नाटक में रूपांतरित करने के लिए एक विशिष्ट दृष्टि चाहिए होती है। एक ऐसी दृष्टि जो किसी रचना को नाटक की संभावना की नजर से देख सके। नाट्य रूपांतरकार के लिए तो यह और भी कड़ी चुनौती है क्योंकि उसे किसी आलोचक की तरह रचना में नाट्य संभावनाओं की ओर संकेत भर नहीं करना होता है, उसे उन संभावनाओं को साकार भी करना होता है। यह बिना 'नाट्यानुभूति' के संभव नहीं है। किसी रचना की घटना में कहां नाट्य संभावना छिपी है ? पात्रों के व्यक्तित्व में कितनी नाटकीय संभावना है ? कथानक में कहां-कहां वे बिन्दु हैं जहां द्वन्द्व अपने तीव्रतम रूप में उभर कर आ सकता है ? यह सब एक नाट्य-रूपांतरकार को खोजना और प्रस्तुत करना होता है। तभी जाकर कोई रचना नाटक में रूपांतरित होकर एक विशिष्ट अर्थगर्भित रचना हो सकती है।

जब यह कहा गया है कि नाटक एक संवादात्मक कथा है तो इसका आशय यह कतई नहीं है कि किसी कथा को संवादों में लिख दिया जाए तो वह नाटक हो जाएगी। नाटक के क्षेत्र में शुरूआत करने वाले लोग चाहे वे नाटककार हों या नाट्य रूपांतरकार वे यहां एक गलतफहमी के शिकार होते हैं। वे किसी कहानी को संवादों के रूप में लिख देते हैं और कहानी के वातावरण को कोष्ठक में दृश्य के रूप में और समझते हैं उन्होंने नाटक लिख दिया या किसी घटना, कहानी या कविता का सफल नाट्य रूपांतर कर दिया। मगर ऐसा नहीं है।

एक नाट्य रूपांतरकार को इस तरह के प्रश्नों पर भी विचार करना होता है कि क्या नाटक के संवाद और कहानी या उपन्यास के संवाद एक ही कोटि में रखे जा सकते हैं ? क्या इन दोनों की प्रकृति में कोई मूलभूत अंतर नहीं होता ? क्या उनमें कोई विधागत मूलभूत अंतर नहीं होता ? जब इन प्रश्नों पर विचार करेंगे तो पाएंगे कि कहानी के पात्रों द्वारा बोले गए संवाद नाटक के लिए अपर्याप्त साबित हो सकते हैं यदि उनमें वे तमाम गुण मौजूद नहीं हैं जो कि नाट्य और रंगमंच की दृष्टि से आवश्यक हैं। इसी से जुड़ा एक और सवाल यह है कि क्या किसी भी कथा पर नाटक लिखा जा सकता है अथवा नाट्य रूपांतरण किया जा सकता है ?

रूपांतरण की दृष्टि से उमंग में शामिल तीनों ही रचनाएं सफल ही नहीं श्रेष्ठ रूपांतरण हैं। एक बात और-'अनमोल खजाना', 'ब्रह्मराक्षस का नाई', आविष्कार जूते का' इसलिए भी इस किताब की हिट रचनाएं हुई हैं क्योंकि इनकी रचनाशीलता में एक से अधिक लोगों की प्रतिभा लगी हुई है। मौलिकता के आग्रह से मुक्त इन रचनाओं में एक अलग ही तरह का अनोखापन है।

'जूते का आविष्कार' राजसत्ता में भरे अयोग्य, अक्षम, दृष्टिहीन लोगों के जमावड़े और उसकी मूर्खतापूर्ण असभ्य, जंगली कार्यपद्धति के चलते आमजन पर लगातार चलती रहती अन्यायपूर्ण कार्यवाहियों को उघाड़ने वाला व्यंग्यात्मक नाटक है। यह नाटक सामंती पृष्ठभूमि की राजसत्ता की कार्यशैली पर लिखा जाकर भी वर्तमान गणतंत्र के लिए भी उतना ही सच है। इसी तरह अनमोल खजाना एक राजा और गड़रिया के व्यक्तित्वों की टकराहट के जरिए मानवीय व्यक्तित्व की वास्तविक महानता की खोज और पुनर्स्थापना का नाटक है।

नाटक प्रायः एक अपठनीय विधा है। यही वजह है कि पाठ्यक्रमों से बाहर नाटक का पाठकवर्ग उतना बड़ा नहीं है जितना कि कहानी, उपन्यास या कविता का। मगर जो बेहतरीन नाटक होते हैं, वे अपनी संवाद भाषा से बांध लेने वाले होते हैं। 'ब्रह्म राक्षस का नाई' ऐसा ही नाटक है। यह नाटक पढ़ने में ही इतना मजेदार है तो रंगमंच पर कितना मजेदार होगा इसकी कल्पना पाठक इसे पढ़कर कर सकते हैं। इस नाटक के संवाद क्या हैं-भाषा की रसभरी हैं-

''राक्षस- यह कामनसेन्स क्या होता है ?

नाई- (स्वगत) अब इसे छकाना चाहिए। (प्रकट) कामनसेन्स! अरे कामनसेन्स कामनसेन्स होता है।

राक्षस- लेकिन होता क्या है ?

नाई- (मुस्कराता है) ओह तुम्हें ज्ञान के इस सुंदर से फल के बारे में ही नहीं पता तो फिर तुम्हें पता क्या है!''

'मोहन का दुख', 'जंगे आजादी', 'ऑड मैन आउट उर्फ बिरादरी बाहर' आदि इस किताब के कुछ अच्छे मौलिक नाटक हैं। गिरिराज किशोर द्वारा लिखित 'मोहन का दुख' नाटक की खूबसूरती यह है कि इसमें एक किशोर बच्चे के मन के अन्तर्द्वन्द्व को विषय वस्तु के रूप में चुना गया है। मंदिर जाती बा के साथ घूमने के लिए मोहन मंदिर तक तो जाता है लेकिन अंदर जाकर मूर्ति के दर्शन में उसे सार्थकता नहीं नजर आती। बा आग्रह करती है लेकिन उसे वह करना ठीक लगता है जो उसे अपने विचार से समझ आया। बा के आग्रह के बाद भी अपने विचार पर दृढ़ रहना ही सबसे बड़ी चुनौती थी जिसका सामना मोहन निष्कंप सहजता के साथ करता है-

''बा-रुक क्यों गया रे चल अंदर दर्शन कर ले ?

मोहन- तुम हो आओ मैं यहीं खड़ा हूं। ''

'जंगे आजादी' कमलेश्वर का गुलामी की एक सदी के अंधेरे में आजादी के लिए संघर्ष के चमकते क्षणों का रोमांचक नाट्यालेख है। हिन्दुस्तान की आजादी के संघर्ष में अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ बगावत की थीम पर यह ऐतिहासिक नाटक है। अशोक वाजपेयी ने ऐतिहासिक, समसामयिक, अन्य विधा से रूपांतर आदि नाटक लेखन की विविध शैलियों का किताब में समावेश कर इस संचयन को विविधतापूर्ण और सरस बनाया है।

'टिम्बकटू' नाटक के गीतों में लयात्मकता है। इन्हें पढ़कर बच्चे अपने आप लय पकड़ सकते हैं। इस नाटक में सबसे बढ़िया चरित्र टिम्बकटू ही है। इस नाम की खोज में रमेश चन्द्र शाह ने जिस कल्पनाशीलता का परिचय दिया है वह तो एकदम जादू है। बच्चों को यह बहुत आकृष्ट करेगा मगर नाटक के अन्य अंगों जैसे विषयवस्तु में नवीनता, कहन में अनूठापन आदि मामलों में ये जादू गायब है। नाटक के एक दृश्य में पीठ पर भारी बस्ता लादे विक्की, मुक्कू, अहमद, टॉम, बिन्नी, रीका आगे-आगे चले आ रहे हैं। स्कूल जाने वाले बच्चों के समूह को हम देखें तो पाएंगे कि यह एक आदर्श समूह है जो हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई आपस में सब भाई-भाई का जीता-जागता रूप है जो सड़क पर जा रहा है, विडम्बना ही है कि ऐसा जीवन में कहीं नहीं दिखाई देता है। इससे ज्यादा बड़ी विडम्बना यह है कि जो चीज जीवन में नहीं वह लेखन में क्यों कर है या फिर इसे किस तरह आना चाहिए कि सरलीकरण न लगे।

नाटक के एक और दृश्य में चंदा मामा की झल्लाहट देखें-

''क्या बकते हो टिम्बकटू

बच्चे हमको भूल रहे हैं

हम जो उनकी खातिर कब से

आसमान में झूल रहे हैं''

लेखक का दर्द यह है कि बच्चे चांद को भूल रहे हैं। इसके मायने ये हो सकते हैं कि बच्चों का प्रकृति से रिश्ता खत्म हो रहा है। प्रकृति के सौंदर्य से उनका तादात्म्य कम हो रहा है। यह एक वाजिब चिन्ता है मगर एक सपाट पंक्ति हमारे भीतर चांद के सौंदर्य के प्रति कितनी संवेदना जगा सकती है ? स्कूली बच्चों की समस्याओं पर केन्द्रित नाटक टिम्बकटू में जो समस्याएं उठाई गई हैं-स्कूल में मिलने वाली सजा, होमवर्क का बोझ, अक्षम शिक्षक, अभिभावकों के पास बच्चों के लिए समय नहीं, ट्यूशन का दबाव, ऑटो ड्राईवर की लापरवाही आदि आदि आदि। सब कुछ को छू दिया है मगर किसी भी समस्या को इस तरह से नहीं छू पाए हैं कि पाठक को भी छू जाए।

कुछ-कुछ इसी किस्म से अनवीन ढंग का नाटक दिविक रमेश लिखित 'बल्लू हाथी का बालघर' है। 'ये सृष्टि निर्माता' डॉ. कमल वशिष्ठ का लिखा नाटक है। इसे पढ़ते हुए भी बार-बार इस प्रश्न पर ध्यान चला जाता है कि इसके किस गुण के कारण अशोक वाजपेयी ने इसे संचयन में शामिल किया होगा। यही बात 'चप्पल कांड' के बारे में भी सही है। 'ये सृष्टि निर्माता' नाटक के तमाम संवादों के आगे से उनके पात्रों के नाम-इलेक्ट्रोन, न्यूट्रोन, प्रोटोन आदि हटा दें तो विज्ञान का अच्छा खासा लेख नजर आता है। हिन्दू देवताओं की एंट्री से इसे रोचक बनाने का व्यर्थ प्रयास भी किया गया है। उदाहरण देखिए-

''नाभिक- बताओ तुम्हारा तीसरा भाई इलेक्ट्रोन कहां गया?

प्रोटोन- वह आ रहा है पिताजी।

नाभिक- हां तुम तीनों का अस्तित्व ही मेरा अस्तित्व है-समझे! तीनों एक स्वर में- नहीं पिताजी, हम तीनों ब्रह्मा, विष्णु, महेश की तरह हैं। आप में हम तीनों का मिला-जुला रूप है जिसे दत्तात्रेय कह सकते हैं।''

'साम दाम दंड भेद' एक बंदर द्वारा क्रिकेट खेल रहे बच्चों का एक स्टम्प ले भागने की नाटकीय घटना के इर्द-गिर्द बुना गया मृदुला गर्ग लिखित नाटक है। शीर्षक से पता चल ही जाता है कि बच्चों और उनके हितैषियों ने 'साम दाम दंड भेद' से बंदर से स्टम्प छुड़ाने की कोशिश की होगी। लेखिका ने पूरी कोशिश की है कि भाषा को खिलंदड़ा बनाया जाए, पात्रों द्वारा कुछ नाटकीय मुद्राएं प्रस्तुत की जाएं। मगर कोई भी कोशिश किसी भी तरह का कोई असर नहीं छोड़ती है। उसमें एक भी स्थिति या संवाद ऐसा नहीं है जिसका पाठक को पूर्वानुमान नहीं हो जाता हो। जब पाठक ने खुद ही पूर्वानुमान से अपने लिए चीज गढ़ ली और वही उसे आगे नाटक में भी मिली तो इस पूरी प्रक्रिया में पाठक को मिला क्या ?

इस नाटक में कहने के लिए एक चीज यह हो सकती थी कि बच्चों की भाषा गढ़ने की जादुई क्षमता का कुछ अंदाजा दिया जाता। मगर ऐसा हुआ नहीं। यहां बच्चों द्वारा अनायास ही कहीं ऐसी कोई बात नहीं कह दी गई है जिससे आपकी अक्ल फेर में पड़

जाए। कोई ऐसा अनूठा वाक्य आपके कानों में नहीं पड़ता जिसकी संरचना पर आप सोचते ही रह जाएं। इस नाटक की भाषा से बच्चों की भाषा की जादुई कल्पनाशीलता का कुछ अंदाज नहीं होता। आप ऐसी भाषा पाते हैं जिसमें बड़े सोचते हैं कि क्या बच्चे ऐसी भाषा बोलते होंगे ? लेखिका वह नहीं खोज पाई जो बच्चे बोलते हैं। असल में ये बच्चों के खेल की दुनिया में लम्बा समय बिताने का श्रमसाध्य काम है। किसी फ्लैट की बालकनी से गार्डन में खेलते बच्चों को एकाधबार देखकर और उनकी क्रिड़ाओं को आत्मसात कर जैसा नाटक लिखा जा सकता है वैसा तो ये है पर वह नहीं जो चाहिए। क्योंकि जो है उससे बेहतर चाहिए।

जीवन में बंदर की दखलंदाजी क्या होती है इसका अंदाजा कृष्णा सोबती की कहानी से लगता है। वहां इतने जीवंत विवरण हैं कि भाषा ठहरे हुए पानी की तरह गोल-गोल नहीं बल्कि नदी की तरह छलांगें और चौकड़ी भरती है।

'ऑड मैन आउट उर्फ बिरादरी बाहर' को इस संयचन की उपलब्धि कहा जा सकता है।

''शैलजा की मम्मी- रोहन और डॉली की कार में ए. सी. चलाया हुआ था क्या ?

शैलजा (कुछ रुककर)- नहीं तो।

शैलजा की मम्मी- सच बता बेटा।

शैलजा- कार में ए. सी. चलाने के लिए ही होता है न मां! उन्हें ए. सी. के बिना घुटन महसूस होती है।

शैलजा की मम्मी- घुटन? कहो कि सुबह-सुबह की बाहर की ताजी हवा उन्हें अच्छी नहीं लगती। तूने झूठ क्यों बोला कि ए. सी. से तबीयत नहीं बिगड़ी तेरी।

शैलजा- सच बोलूं तो आप और पापा झगड़ने लगोगे। आप पापा को डांटोगे कि इतने पॉश इलाके में कम्पनी फ्लैट क्यों लिया और पापा आपको कि फ्लैट लिया सो लिया पर इतने हाईफाई स्कूल में बेटी को भेजने का जोश किसको चढ़ा था।''

ये तो हुई परिवार के भीतर और बाहर की जद्दोजहद। अब इस परिवार ने अपने लिए जो बाहर चुना है उसमें शैलजा को किन-किन मानसिक दबावों और तिरस्कारों से गुजरना पड़ता है। (उन्हीं से तो खैर यह सारा नाटक बुना गया है) यहां केवल एक उदाहरण से काम चलाना होगा-

''अलिफ-लुक! इस पर चार चेहरे बने हैं- बताओ, व्हिच इज द ऑड मैन आउट ?

रोहन- हुंह, इसे बताना कौनसा मुश्किल है।

(सब शैलजा की ओर देखते हैं और हंसते हैं।)''

शैलजा क्यों 'ऑड मैन आउट' है ? इसलिए कि उनके पास नई से नई ए.सी. कार नहीं खटारा फिएट है। वह अपनी सारी जिम्मेदारियों का पालन करती है, पैसे और बंगले के सपने नहीं देखती है और ध्यान दें इसलिए भी कि शैलजा को अंग्रेजी के साथ-साथ अच्छी हिन्दी भी आती है। वह हिन्दी में सर्वेश्वर जैसे नये कवियों की कविता तक को समझ लेती है। इसलिए वह 'ऑड मैन आउट' है। लगभग सभी विषयों में उसकी कॉपी से नकल मार कर काम चलाने वाले मनी-मनी के ख्वाबों से भरे बच्चे उससे कहते हैं- व्हाय व्हाय हिन्दी हाय हाय हिन्दी।

सुधा अरोड़ा का यह नाटक किताब का सबसे सुंदर नाटक है। विषयवस्तु के नयेपन की दृष्टि से, भाषा में नयेपन की दृष्टि से, संवादों में काव्यात्मक संक्षिप्तता की दृष्टि से, कहने के अनूठेपन की दृष्टि से, वक्त की नब्ज पर हाथ धर देने की दृष्टि से और सबसे बड़ी बात-बात बात में नाटकीय परिस्थितियां खड़ी कर देने की गजब की क्षमता की दृष्टि से।

पूरी किताब पढ़ने के बाद लगता है कि इसमें लगभग आधी रचनाओं को शामिल नहीं भी किया जाता तो भी ये इतनी ही महत्त्वपूर्ण किताब होती। इस किताब का कलेवर देखकर इसे किशोरों के लिए अलगाना मुश्किल है। ज्यादा अच्छा होता कि हर नाटक एक अलग पुस्तिका के रूप में होता और उसमें चित्र और नाटक के फोटोग्राफ भी खूब सारे होते। हमारे यहां आमतौर पर बच्चों के स्वतंत्र पठन की स्थिति वैसे ही बहुत नाजुक है, उसे इस तरह की गरिष्ठ प्रस्तुति और भी नाजुक बना देती है।

अशोक वाजपेयी हिन्दी के बड़े लेखक हैं उनके आग्रह पर हिन्दी के कुछ ऐसे साहित्यकारों ने भी इस संचयन के लिए लिखना स्वीकार कर लिया है जो कि आमतौर पर बच्चों के लिए नहीं लिखते। यह वाकई एक उत्साहजनक बात है। संचयन हिन्दी में एक अभाव को भरेगा इसमें कोई संदेह नहीं फिर भी जब तक हिन्दी साहित्यकारों में बच्चों के नाटक के लिए स्वतः स्फूर्त पहल नहीं होगी तब तक बाल रंग आंदोलन के विकास की गति दो कदम आगे चार कदम पीछे वाली ही बनी रहेगी। ◆